# बिना वजह तो नहीं

जिंदर

# बिना वजह तो नहीं

https://www.hindiadda.com/bina-vajah-to-nahin/

पहले थोड़ा 'बैक ग्राउंड' के तौर पर बता लूँ। यह शब्द सुविधा के लिए गढ़ना पड़ा। आपकी और कई अन्य लोगों की सुविधा के लिए। मेरे अपने विचार में यह वह नहीं है जिसे आप समझ बैठेंगे।

तीन पात्र हैं - दुर्गादास कलेर, ज्ञानो और बब्बा।

मैं इसके टुकड़े-टुकड़े एपीसोड्स की शूटिंग कर रहा हूँ। इसका कोई बंधा हुआ शिड्यूल नहीं रखा। शूटिंग तो कहीं से भी शुरू की जा सकती है। आरंभ से। मध्य से। या न मध्य से, न आरंभ से। अंत से। पहले मेरे पास कहानी होती है। आपबीती भी, जगबीती भी। रुक-रुककर मेरी कल्पना के कबूतर उड़ते हैं। कभी कभी मैं स्वयं भी इन्हें उड़ाया करता हूँ। सवेर को। शाम को। सोते समय। फिर काम शुरू करता हूँ। कहीं से भी। तब मुझे अधिक सोचना नहीं पड़ता। अधिक मेहनत नहीं करनी पड़ती। बहुत कुछ अवचेतन में से मिलता। पता नहीं लगता - यह कहाँ-कहाँ से आया होता है। कहाँ-कहाँ की तांतें जुड़ी होती हैं। कई कुछ तो मेरी चेतना में भी नहीं होता। मुझे खुद पर आश्चर्य होता।

इस टेलीफिल्म का अंतिम हिस्सा मुझे बड़ा अच्छा लगता। पहले मैंने इसे ही फिल्माया। अब मेरी एक ही समस्या है कि इसे शुरू कहाँ से करूँ। बहुत बड़ी समस्या। पहले कभी मेरे साथ ऐसा नहीं हआ। शुरुआत और अंत के बारे में मैं स्पष्ट होता हूँ। बहुत से परिवर्तन बीच में ही करने पड़ते हैं। पर ज्ञानो की सोच ने मुझे दुविधा में फँसा रखा है। तब से ही जब से मैंने इस पर काम करना आरंभ किया। यह अभी हल नहीं हुई। शायद सारी शूटिंग करने के पश्चात इसका सिरा पकड़ पाऊँ।

इसे शुरू करने के पाँच एपीसोड हैं। इनमें से एक आपको बताता हूँ। यह फ़ैसला करना अभी बाकी है कि इनमें से कौन सा बेहतर होगा, या मुझे अच्छा लगेगा। हो सकता है कि मैं कोई ऐसा स्थान ही चुन लूँ जो कि प्रतीकात्मक हो।

फिलहाल मैंने टेलीफिल्म यहाँ से शुरू की है।

"तुमने शीला को फोन किया था?"

"नहीं।"

"भोली को?"

"नहीं।"

"क्यों?"

"ख़याल ही नहीं रहा।"

"इतनी खुशी हुई थी?"

"नहीं।"

"मुझे पता है, तू खुश हुए बिना नहीं रह सकता।"

"मुझे तो इस बात का पता नहीं लगा।"

"पहले लड़कियों को बताना चाहिए था। जब तक उन्हें पता न लगेगा, तब तक उनका ध्यान इधर ही लगा रहेगा।"

"सुबह फोन करूँगा। या तू खुद ही उन्हें मिल आना और बता आना।"

"मैं तो जाऊँगी ही।"

"इतनी उतावली न पड़ा कर।"

"उनके अलावा हमारा है भी कौन?"

इसको दौरा पड़ने लगा है। वही दौरा जो कि इसको पहली बार बब्बे की लाश देखकर पड़ा था। श्मसान घाट से लौटती हुई धड़ाम से ज़मीन पर गिर पड़ी थी। फिर यह पाँचवे-सातवें दिन पड़ने लगा था। फिर महीने बाद। अब इसका कोई निश्चित समय नहीं रहा। कई कई महीने बीत जाते। लगता ही नहीं कि यहाँ कोई ट्रेजडी घटी है। वह काम करती न थकती। न ऊबती। लेकिन जब दौरा पड़ता, फिर इसे अपनी सुध-बुध न रहती। गठरी बनी, जहाँ बैठ गई, फिर उठने का नाम न लेती। टकटकी लगाकर बाहरी दरवाजे की ओर देखने लग जाती। दुर्गादास लाख आवाज़ें लगाता रहे, प्रत्युत्तर में यह कुछ नहीं बोलती। यह रुक-रुककर 'हे राम' कहती। मुँह पर हाथ फेरती। फिर 'हे राम' कहती। लंबी सुर में। आँखें बंद किए। कोई हरकत न करती। घंटा, डेढ़ घंटा बीत जाता। दुर्गादास डर जाता।

एक दिन ज्ञानो दिल ढाए बैठी थी तो उसने इधर-उधर की बातें करके यह साखी सुनाई थी, "एक दिन बाबा नानक और मरदाना स्यालकोट की ओर जा रहे थे। उन्होंने शहर से बाहर डेरा लगा लिया। मरदाने ने पूछा - गुरू देव, सच क्या है? झूठ क्या है? बाबा

जी ने मरदाने की तरफ़ देखा। उन्होंने सोचा - इसे किस भ्रम ने घेर लिया। उन्होंने मरदाने को दो पैसे दिए। कहा, जा शहर जा। वहाँ मूला खत्री होगा। उससे कहना - एक पैसे का सच दे दे, एक पैसे का झूठ। मरदाना दुकान पर चला गया। उसने सच और झूठ माँगा। मूले ने मरदाने की तरफ़ हैरानी से देखा। पैसे ले लिए। दो पुड़िया बाँध दीं। मरदाने ने दोनों पुड़िया बाबा को लाकर थमा दी। बाबा ने मरदाने से कहा - पुड़िया खोल। पढ़कर सुना। मरदाने ने पहली पुड़िया खोली। लिखा था - मरना सच है। दूसरी पर लिखा था - जीना झूठ है।"

एक उदास हो जाता तो दूसरा सँभालता। वे सुनी-सुनाई कथा-कहानियाँ एक-दूजे को सुनाते।

ऐसे ही एक दिन ज्ञानो ने उसको यह कहानी सुनाई थी, "कहते हैं, मौत का समय निश्चित होता है। एक पल भी इधर से उधर नहीं हो सकता। यह कहानी मुझे एक सौ दस वाली ने सुनाई थी। एक राजा था। उसका दूर दूर तक यश था। एक दिन राज ज्योतिषी ने भविष्यवाणी की कि राजा की मृत्यु साँप के काटने से होगी। यह सुनकर राजा चिंतित हो उठा। उसने अपने वज़ीरों की बैठक बुला ली। सभी के विचार सुने। अंत में यह फ़ैसला हुआ कि एक ऐसी नाव बनाई जाए जिसके चारों ओर छुर्रियाँ लगी हों। जो भी जानवर करीब आए, कट जाए। नाव बन गई। राजा और रानी नाव पर सवार होकर झील के मध्य रहने लगे। वज़ीरों के अलावा राजा से कोई भी नहीं मिल सकता था। वज़ीर भी सप्ताह में केवल एक बार मिलने को जाते। राजा का हुक्म लेकर लौट आते। राज ज्योतिषी की भविष्यवाणी भी सच साबित होनी थी। राजा को खुश करने के लिए एक दिन बड़ा वज़ीर फूलों का गुलदस्ता लेकर गया। इधर उसने गुलदस्ता भेंट किया, उधर फूलों में छिपे बैठे साँप ने राजा के हाथ में डस लिया। हकीम आते इससे पहले ही राजा ने दम तोड़ दिया।"

दुर्गादास ज्ञानों की ओर बार-बार देखता है। उसे ज़ोरों की भूख लगी है। जाते समय ज्ञानो ने चार पराँठे बाँध दिए थे। उसे खाने का अवसर ही नहीं मिला था। वह उठता है। रसोई में जाकर एक पराँठा खाता है। पानी का गिलास पीता है। ज्ञानो से खाने के लिए पूछना चाहता है, पर पूछता नहीं। पुनः दीवार से पीठ टिका लेता है। बीड़ी सुलगाता है। इंतज़ार करता है कि कब वह कुछ और पूछे।

शीघ्र ही उसके धैर्य का बाँध टूट जाता है।

वह ज्ञानो के पास आ बैठता है।

"हम सिर्फ़ दो प्राणी हैं। अपना घर है। दो रोटियाँ खानी होती हैं। दोनों में एक भी काम कर ले तो गुजारा चलता रहेगा। दामाद नेक मिले। लड़कियों को कोई चीज़ लेकर दो तो वे नहीं ले जातीं। यहीं छोड़ जाती हैं। आप कभी खाली हाथ नहीं आतीं। कोई न कोई चीज़ खरीदकर रख जाती हैं। अब दोनों बहनें आपस में सलाह बनाए घूमती हैं कि हमें वे टेलीविज़न लेकर देंगी। है न उल्टी बात। मैं बेटियों से लेता अच्छा लगता हूँ। उन्हें कौन समझाए। कह देती हैं - हमने कौन सा किसी से माँगना है। अपनी हक-हलाल की कमाई का लेना है।"

"टी.वी. तो हमें ज़रूर लेना है। दो घड़ी देख लिया करेंगे। दस नंबर वाली कहती थी कि बिना ब्याज दिए किस्तों पर मिल जाता है, रंगीन टी.वी.। रंगीन क्या करना है? काला-सफ़ेद ही ठीक है। ढाई-तीन हज़ार का आ जाएगा। शायद दस नंबर वाली ले दे। वह बड़ी मेहरबान बूढ़ी है। अच्छे मूड में हो तो पैसे खर्च करने में उफ्फ नहीं करती।"

दुर्गादास उसकी प्रशंसा करता है। पर अधिक देर नहीं। वह अकेला भी कितनी देर बोल सकता था। जब उसने हुंकारा भरना बंद कर दिया तो वह फिर से अपनी चारपाई पर आ पड़ता है।

उसे बेचैनी हो रही है। उसका मन उसके वश में नहीं है। कई ख़याल आते हैं। शरीर फोड़े-सा दुख रहा है। वह थका हुआ है। जल्दी सोना चाहता है। लेकिन नींद उसके पास नहीं फटकती। इधर-उधर के सोच-विचार में पड़ा हुआ ही वह चौंकता है। उसे लगता है जैसे किसी ने कहा हो, "तू कमीना है।" यह किसने कहा है। ज्ञानो ने या किसी अन्य ने। दोपहर के बाद वह कई बार यह शब्द सुन चुका है। तब भी जब वह वकील के खोखे के बाहर पड़े बेंच पर पालथी मारकर बैठा था। बीड़ी जलाए। यही आवाज़ थी। जनाना आवाज़। उसे यह अपना भ्रम लगा था। कई दिनों से उसने बहुत सारी आवाज़ें सुनी थीं।

ये एकाध दिन याद रहतीं। फिर वह भूल जाता। पर इस आवाज़ ने उसका पीछा नहीं छोड़ा था। आवाज़ बाईं ओर से आती। उसने इसे दुत्कार दिया था। जैसे कोई किसी आवारा कुत्ते को दुत्कारता है। उसके सामने वही बुज़ुर्ग आ खड़ा होता। वह उसे बुज़ुर्ग कहकर बुलाता। बुज़ुर्ग उसका नाम लेकर बातें करता। उसका केस भी उसी वकील ने ले रखा था। संयोग से दोनों की तारीखें भी एक ही दिन आतीं। वे साथ बैठकर रोटी खाते। चाय पीते। दुर्गादास बीड़ी पीता। बुज़ुर्ग सिगरेट। उसे बीड़ी पीकर संतोष न होता। दुर्गादास को सिगरेट का स्वाद बकबका लगता। वे छोटी-छोटी बातें करते। दुर्गादास को वह अपना कोई बूढ़ा-बुज़ुर्ग लगता। वह दुर्गादास को समझाता, "ले, तू

मेरी तरफ़ देख। पहले मैं पाकिस्तान से उजड़कर आया। अब इस भसूड़ी में फँस गया। आगे का कुछ पता नहीं। मैं किसी फन्ने खाँ की परवाह नहीं करता। घबराने से कुछ नहीं बनता। आदमी तो बना ही संघर्ष करने के लिए है। तू कौन सा किसी से ख़ैरात माँग रहा है। कसूर बस ड्राइवर का था। तुझे हर्ज़ाना मिलना चाहिए। उतना भर जिससे तेरी बाकी ज़िंदगी अच्छी तरह बीत जाए। अपने हक के लिए हर कोई लड़ता है। बाजों वाले ने यही शिक्षा दी है।"

अब फिर ज़नाना आवाज़ उसको कुछ अधिक ही तंग करने लग पड़ी है। कानों के पास आकर ऊँचे स्वर में कहती है, "तू कमीना है। तूने अपने बेटे की कीमत लगा ली। तू कमीना...।"

वह उठकर आँगन में आ खड़ा होता है। उसे बहुत कुछ याद आता है।

"माई बाप, मेरे बुढ़ापे का अकेला सहारा भी मेरे पास नहीं रहा। बेटा ही बुढ़ापे में आख़िरी सहारा होता है। उसकी कब्र पर वही दीया जलाता है। अब मैं अपना बुढ़ापा कैसे काटूँगा। मुझे कुछ पता नहीं चलता। उसकी जगह ईश्वर मुझे उठा लेता। मेरी कमाई का कोई निश्चित ठिकाना नहीं। बन जाएँ तो चाहे पचास-सौ बन जाएँ, न बने तो दस भी नहीं बनते। माई बाप, अब आप ही मेरे परमात्मा हो। मेरे बारे में अब आपको ही सोचना है। अब मेरी बूढ़ी हड्डियों में जान नहीं रही। घरवाली को अलग सँभालना पड़ता है। आख़िर वह माँ है। वह दीवारों में सिर मारने लग जाती है। उसका भी कुछ सोचो। चार-पाँच सौ रुपया तो उसकी दवाइयों के लिए ही चाहिए होता है। डॉक्टर कहता है कि उसके खून में कोलेस्ट्रोल की मात्रा बढ़ गई है।"

जिस दुर्गादास को मैं जानता हूँ या जिस दुर्गादास से मैं इतनी बार मिला हूँ, वह इतना लाचार नहीं है। जब उसके वकील ने उसको इन शब्दों की रिहर्सल करवाई थी तो उसने हर बार इनकार किया था। वकील ने समझाया था, "चौधरी साहब, यहाँ झूठ बोले बग़ैर नहीं चलने वाला। तुम्हें दो मिनट की एक्टिंग करनी है। बाक़ी सब कुछ मुझे सँभालना है।" फिर उसने कमाल कर दिया था। आँखों में से टप टप आँसू गिरे थे। जज पसीज गया था।

मैं स्वयं इस सीन को लेकर शशोपंज में हूँ।

निचले तबके का भी अपना करेक्टर होता है। उसूल होते हैं। आन होती है। स्वाभिमान होता है। इन्हें तंगी-तुर्शियों में जीना आता है। समय गुजारना आता है। डोल तो कोई भी सकता है। मैं, आप या कोई भी अंहकारी।

हो सकता है - मैं यह सीन काट दूँ।

इसे अभी रखा हुआ है। इसके विषय में दोबारा सोचूँगा। आपकी सलाह भी लूँगा। दुर्गादास से। नहीं, मैं उससे पूछ नहीं सकूँगा। मुझे उससे कुछ भी नहीं पूछना।

किसी दिन मैं आपको उस आदमी को दिखा भी दूँगा।

"ओ माई गॉड। मम्मी को फोन करना था। भूल हो गई। कमाल है, मैंने उन्हें याद नहीं कराया। प्लीज़, स्टॉप फॉर ए फिउ मिनट्स...। मम्मी को बता दूँ। वह मेरा इंतज़ार करती होंगी। हमने एक साथ डिनर लेने का तय किया था। यदि दूर-पास जाना पड़ जाए तो मोबाइल पर संपर्क कर लेते हैं। मुझे याद ही नहीं रहा। जर्नलिज़्म का प्रोफेशन ऐसा ही है। घर जाने का कोई निश्चित समय नहीं होता।" रमणीक ने कोक वाला गिलास खाली किया। उल्टी उँगलियों से होंठ पोंछे। उतावली में मोबाइल पर नंबर मिलाया। कमरे में टहलते हुए बताया, "मम्म प्लीज़, आप मेरा इंतज़ार न करना। कमल मेरे साथ अपनी नई टेलीफिल्म की कहानी डिस्कस कर रहा है। मुझे आने में देरी हो सकती है। या मैं यहीं रह लूँगी। आप खाना खा लो। आपके बैडरूम में मेज़ पर मैंने एक कैसेट रखी हुई है। आप सोने से पहले इसे ज़रूर देख लो। मैंने पहले देख रखी है। एक बार फिर देखूँगी। कहानी... कहानी पाँचवी सदी के कबीले की एक औरत की कहानी है जो अपने मरे हुए बच्चे को कबीले की औरतों के साथ मिलकर खाती है। बाकी आपको कुछ नहीं बताना। आप आलस्य नहीं करना। बड़ी मेहनत से यह कैसेट खोजी है। दो दिन के लिए। ऊपर लिखा है - 'चाइल्ड ईटर मदर'। हम इसके बारे में डिस्कस करेंगे। ओ.के. माई डियर मम, गुड नाइट। सो नाइस ऑफ यू।"

अब दुर्गादास के बारे में बताता हूँ। वह दसवीं फेल है। आठवीं में उसकी फर्स्ट डिवीज़न आई थी। इधर वह नौंवी में आया, उधर शहर में एक थियेटर बन गया। उसे फिल्में देखने की लत लग गई। पढ़ाई पीछे रह गई। फिल्मों का जुनून सिर चढ़कर बोलने लगा। दसवीं में दो बार फेल हुआ तो उसका बापू उसे धीमान इंडस्ट्रीज़ में छोड़ आया। उससे भारी काम किया न गया। वह वहाँ से भाग आया। बापू उसे अपने संग ले जाने लगा। यहाँ भी वह गच्चा देकर फिल्म देख आता। उसके बापू को इस बारे में पता था। उसने बातों बातों में उसे समझाया। कच्ची उम्र में नसीहतों का कोई असर नहीं होता। उसने जी भरकर फिल्में देखीं। पर साथ ही साथ एक अच्छा कामकाजी भी बन गया। उसने अपनी अलग पेटी बना ली। फिर चलकर दिहाड़ी बनाने लगा। बापू के निधन के बाद उसने उसका अड्डा सँभाल लिया। जिम्मेदारी पड़ी तो वह सब कुछ भूल गया। यदि कुछ बचा था तो वह फिल्मों का शौक ही था जो कि अब नाममात्र ही था।

उसने बस से उतरते हुए सोचा था कि वह घर जाते हुए गुरपाल सिंह की ओर भी होता चला जाएगा। उसका शुक्रिया कर आएगा। बर्फ़ी वाला डिब्बा उसी के लिए खरीदा था। असली हकदार भी वही था। उसके घर जाने के लिए घूमकर जाना पड़ता। इसीलिए वह आलस्य कर गया था। हालाँकि यह सारा चक्कर उसी का चलाया हुआ था। उसे इन बारीकियों का कुछ पता नहीं था। घर की अधिकांश वस्तुएँ ज्ञानो खरीदती थी। वह फुर्सत में होता तो सामने वाले ढाबे से अख़बार उठा लाता या कोई ग्राहक अपनी अख़बार छोड़ जाता। वह अक्षर-अक्षर पढ़ता। उसके पास तरह तरह के ग्राहक आते। कई सयानी बातें करते। कई सिर खाते। उसको 'हूँ', 'अच्छा जी', 'फिर क्या हुआ' पूछना पड़ता। गुरपाल सिंह भी आता था। उसका पक्का ग्राहक। हफ़्ते में एक बार अवश्य आता। एक नंबर का बातूनी। दुर्गादास को वह कभी भी अच्छा नहीं लगा था। जो बात एक मिनट में हो सकती है, वह उस पर आधा घंटा लगा देता।

एक दिन बताने लगा, "मेरा एक भाईबंद पंजाब रोडवेज़ में अकाउंटेंट लगा है। एक मैरिज़ पार्टी पर मिला था। मुझे उसने बताया था कि सरकारी बस के एक्सीडेंट में मरे व्यक्ति को क्लेम मिलता है। तेरा लड़का भी रोडवेज़ की बस में मरा। तू मोटर एक्सीडेंट क्लेम ट्रिब्यूनल के अधीन पाँच लाख का क्लेम कर दे। टाइम निकाल। हम वकील के पास चलते हैं।" दुर्गादास ने उसकी बात ध्यान से सुनी, पर उसका मन राज़ी न हुआ। उसके पास इतना समय कहाँ था कि वह कचेहरियों के चक्कर लगाता घूमे। जो दो पैसे पास में हैं, वह भी लगा बैठे। उसने 'हूँ-हाँ' की थी। किसी दूसरे दिन गुरपाल सिंह उसके पास आ बैठा। जूती पॉलिश करवाई, पैसे दिए। जाते वक़्त फिर बैठ गया, "दुर्गादास, मान गए तेरे आलस को भी। मैं कौन-सा तेरा दुश्मन हूँ। तेरे फायदे की ही बात कर रहा हूँ। तू पैसे खर्च करने से डर गया। ले, यह भी तेरे मेरे बीच फ़ैसला हो गया। सारा खर्चे मैं करूँगा। जब तू मुकदमा जीत जाए, मुझे लौटा देना। मैं अपने पैसे नहीं छोड़ूँगा। मुझे खुद वकील से काम है। मैं सुबह जाते समय तुझे आवाज़ दूँगा। तू तैयार रहना। पूरे नौ बजे।"

दुर्गादास ने उसे न 'हाँ' की थी, न 'ना'। छह महीनों बाद घर में शांति होनी शुरू हुई थी। ज्ञानो ने दो घरों का काम सँभाल लिया था। वह सुबह जल्दी उठती। चाय बनाती। वह जंगल-पानी से फारिग होकर आता हुआ मोटर पर स्नान कर आता। आने तक रोटी पकी होती। ज्ञानो को आठ बजे चले जाना होता था। दुर्गादास दस बजे जाता था। साठ-आठ बजे वापस आता था। वह बाहर वाला ताला लगाता। एक चाबी ज्ञानो के पास होती थी। काम करने से ज्ञानो का समय अच्छा गुजरने लगा था। काम के लिए उसमें बहुत फुर्ती थी। दुर्गादास के वापस लौटने तक वह रोटी-पानी का काम निबटा

चुकी होती। अब वह फिर से किसी झमेले में नहीं पड़ना चाहता था। वह ज्ञानो से बब्बे को लेकर बहुत कम बात करता। यदि वह कोई बात छेड़ती भी तो वह उसको कोई जगबीती सुनाने लग जाता। वह पुरानी बात भूल जाती।

"मुझे बड़े तड़के सपना आया था कि बब्बे का मुकदमा अपने पक्ष में हो गया।" ज्ञानो ने एक बार फिर यह बात बताई है। वह दुर्गादास की तरफ़ देखती है और उठकर चूल्हे के पास आ बैठती है। रात की रोटी की तैयारी करने लगी है। उसको लगता है कि सुबह वाले दुर्गादास और अब वाले दुर्गादास में बड़ा फ़र्क़ आ गया है। केस जीतने की खुशी में। इतने सारे पैसे मिलने की खुशी में। लड्डुओं वाले डिब्बे की तरफ़ देखकर उसे घृणा हुई थी। वह उससे पूछना चाहती थी, "ये किसके लिए लाया है? तुझे अपने मरे बेटे की खुशी हुई है?" उसके मन में यह ख़याल भी आया कि वह डिब्बा उठाकर कूड़े वाले पीपे में फेंक दे। लोग क्या कहेंगे? मरे हुए बेटे की कीमत लगवा ली। अब लड्डू बाँटते फिरते हैं।

कई और आवाज़ें भी सुनाई देती हैं।

"बल्ले-बल्ले, मौंजें लग गईं। दो लाख रुपया मिल गया। तूने रब से और क्या लेना? बुढ़ापे में काम आ गए।"

"बुढ़ापे की फिक्र मिटी।"

"तू बढ़िया पार्टी कर। चाहे मेरे घर ही रख ले। यूँ ही कंजूसी न करना। नीली छतरी वाले ने तेरी सुन ली। चाहे देर से ही सही।"

"तेरी तो लॉटरी निकल गई।"

"अब तू हमारे कामों से गई। तुझे अब काम करने की क्या ज़रूरत है? दो लाख का सात-आठ हज़ार साल का ब्याज आ जाएगा। दो जनों से ये पैसे नहीं ख़त्म होंगे। तेरे दिन फिर गए। वाहेगुरू-वाहेगुरू कह।"

"हम तेरे से उधार लेकर अपना काम चलाया करेंगे।"

"पाँच-पाँच हज़ार लड़कियों को दे देना।"

"तू दिल छोटा न किया कर। जो वाहेगुरू को मंजूर है, वही होगा। जो उसकी रज़ा में खुश रहता, वही सुखी होता है। तू मेरी तरफ़ देख। बड़ा लड़का एम.एससी. बॉयोलॉजी करता था। जाते समय पैर छूता। मैं उसे रोकती पर वो मेरी कब सुनने वाला था। उल्टा

कस कर जफ्फी डाल लेता। एक दिन अच्छा-भला स्कूटर पर कालेज गया। धुंध में स्कूटर ट्रक के नीचे जा घुसा। उसकी लाश ही घर आई। सब्र करना पड़ा। पहले अपने आप को सँभाला। सरदार जी को सँभाला। बेटियों की तरफ़ देखा। बेटे को भूला तो नहीं जाता। यह माँओं का दुख होता है। पर माँओं को घर की तरफ़ भी देखना पड़ता है। तू अपने आप को सँभाल। तेरी भी दो बेटियाँ हैं। तेरे से ही उनका मायका है।"

रोटी खाने तक वह यही सोचता रहा कि ज्ञानो जैसा कि वह एक बात को बार बार पूछती थी, अब भी पूछेगी, "अच्छा फिर क्या हुआ? पैसे कब मिलेंगे? बैंक में जमा करवाने है या डाकखाने में?" लेकिन उसने तो पैसों के बारे में कुछ भी नहीं पूछा था।

"भली मानुष, जो नीली छत्तरी वाले को अच्छा लगा, वही हुआ। उस कठोर के आगे तो राजों-रानियों की पेश नहीं चलती। हम किसके पानीहार हैं।"

"तुझे माँ के दुख का क्या पता?"

"मुझे सब पता है।"

आगे उससे बोला न गया। आगे बोलने लायक बचा ही क्या था। तारीख़ से तीन दिन पहले और एक दिन बाद तक ज्ञानो की उत्सुकता बढ़ी रहती। वह एक एक बात को बार बार पूछती। दुर्गादास बार बार बताता। वह तारीख़ पर न जाता तब भी काम चल सकता था। पर वह जाता। अपने लिए कम, ज्ञानों के लिए ज्यादा। इन दिनों में वह दौड़-दौड़कर काम करती। मानो उसे किसी बात का हौसला हो। जब कहीं से जगराते की भेटें गाने की आवाज़ आती तो वह ज्ञानो को बिलकुल न बुलाता। ज्ञानो का चिंतपुरनी वाली माता में अथाह विश्वास था। पर जब हरिश्चंद्र तारामती की कथा उस मुकाम पर पहुँचती, जब राहुल की मौत होती है तो वह अपनी ही कोई न कोई कथा छेड़ लेता।

रमणीक कॉफ़ी का कप हो जाए?

अवश्य। मुझे खुद ज़रूरत महसूस हो रही है। चीनी बहुत कम डालना। तुम रसोई में जाओ, मैं इंटरनेट खोल लूँ। देख लूँ, ग्लोबल विलेज की कौन सी ख़ास ख़बर है। यदि समय अधिक लग गया तो मैं घर नहीं जाऊँगी। यहीं सो जाऊँगी...। मैंने तुम्हें अपनी ही बातों में लगा लिया। बीस मिनट बाद हम फिर बैठेंगे। टेली की कहानी दिलचस्प है।

दुर्गादास का मन बीड़ी पीने को उतावला हो रहा है। बड़ी बुरी लत है। वह काम में लगा हो तो घंटा, दो घंटा का पता नहीं लगता। खाली बैठा हो तो इसके बग़ैर दस मिनट

बिताने भी कठिन हो जाते हैं। तलब उठती है और वह एक के बाद दूसरी बीड़ी सुलगा लेता है। यही उसने शौक पाल रखा है। वह जेब में हाथ मारता है। वहाँ कोई बीड़ी नहीं मिलती। कानों पर, जेबों में, धोती के फेंटे में। कहीं नहीं मिलती। वह उठकर आँगन में आ जाता है। अँधेरा पतला होने लगा है। ठंड ज्यादा है। आग जलाने को दिल राजी नहीं होता। न आग जलाई जाती है, न चिलम धरी जाती है। वह फिर चारपाई पर आ पड़ता है। चारों ओर से रजाई खोंस लेता है। थोड़ी सी गरमाहट आती है। अच्छा लगता है। पर नींद का कोई नामोनिशान नहीं है।

ज्ञानो दरवाज़े की ओर देख रही है। जैसे किसी को आना हो।

वह कितनी ही देर कुछ न बोली और न ही उसने आँखें झपकाईं तो वह काँप उठा। पुतली में बढ़ती सफ़ेदी, चेहरे पर फैली कालिमा की घनी परत, ये उससे देखा नहीं जाता।

"क्या सोचे जा रही हो?"

"मुझे क्या सोचना हुआ?"

"कल शीला की तरफ़ चक्कर लगा आएँ?"

"जैसा मर्जी कर ले।"

दुर्गादास को उसके संग रहते चौबीस साल हो गए हैं, पर वह इसके मूड को समझ नहीं सका। उसकी माँ ने उसे समझाया था, "बेटा, तू ज्ञानो को कभी घूरना मत। यह दिल की बुरी नहीं। इसके मन में कुछ नहीं। ये पाँच बहनें हैं। लड़कियों वाला परिवार। जिस घर में लड़कियाँ ही लड़कियाँ हों, उनमें हीनभावना ज्यादा होती है।"

अब भी वह ज्ञानो की इच्छा जानना चाहता है। जब से शीला और भोली गई हैं, तब से यह कुछ अधिक ही दिल ढाए बैठी है। दोनों बेटियाँ बारी बारी से फेरा लगा जाती हैं। कभी एक साथ भी आ जाती हैं। एक-दो दिन रहती हैं। ज्यादा रुकना संभव नहीं होता। बच्चे छोटे हैं। उन्हें कामों पर भी जाना होता है। अपना घर-बार भी देखना होता है। दामाद अच्छे हैं। बड़ा बैंक में क्लर्क लगा है। जितनी बार भी आए, ज़ोर डालता रहता है, "भापा जी, छोड़ो कामधंधा। बहुत कर लिया। अब हमारे पास आ जाओ।" उसका मन करता है कि वह कहे कि वह तो यहाँ की बदली करवाकर आ जाए। उनके पास रहे। पर उससे कहा नहीं जाता। छोटे की अपनी दुकान है। अच्छी चलती है। वह स्कूटर पर खड़े-खड़े चक्कर लगा जाता है।

दुर्गादास की बेचैनी का बड़ा कारण मिलने वाला दो लाख रुपया है। बस में बैठे बैठे उसने अपनी स्कीम बनाई थी। अब वह अपनी दुकान खोलेगा। बहुत देर कंधों पर पेटी उठा ली। बहुत अड्डे बदल लिए। अब उससे बोझ नहीं उठाया जाता। अपनी दुकान हो तो इज्ज़त बढ़ती है। दुकान उसने देख रखी है। बीस हज़ार पगड़ी का देना है। पचास हज़ार का सामान डाल लेना है। यदि ज्ञानो ने उसकी एक न चलने दी तो? उसने अपनी ही गिनतियाँ कर रखी हैं। वह कहेगी, "पाँच पाँच हज़ार दोनों लड़कियों को दे दो। यदि मेरी मानो तो बड़े को स्कूटर ले दो। वह मेरा बड़ा बेटा है। बाकी बैंक में जमा करवा दो।"

"तुझे नींद नहीं आती?"

"..."

"सो गई?"

"कहाँ?"

लंबी चुप।

"तू क्यों नहीं सो जाता?"

"अब तो दिन चढ़ने वाला है।"

"चाय पीनी?"

"तू ज़रा पत्ती तेज डालकर बना ला।"

...मैं सिगरेट पी लूँ। अगला सीन देखकर मैं स्वयं नरवस हो जाऊँगा। अगर तुम्हें कॉफ़ी पीनी है तो बना लाता हूँ। ज्यादा समय नहीं लगेगा। सिर्फ़ दो मिनट। नहीं-नहीं। यह तुम्हारी इच्छा है। चलो, यह सीन देखो...

"तेरी चाय ठंडी हो जाएगी।"

"वकील ने बताया कि जज ने दो लाख का हर्जाना देने का हुक्म दिया है। उसने अपने फैसले में लिखा है - एक मोची का बेटा आदमी नहीं बन सकता था।"

"तू क्या वकीलों वाली बोली बोले जाता है। मुझे अच्छी तरह खोल कर समझा।"

"जज ने कहा कि बब्बा नौवीं जमात में पढ़ता था। उसने अधिक से अधिक दो तीन जमातें और पढ़नी थीं। फिर या तो उसने अपने बाप वाला पुश्तैनी काम करना था या कोई ऐसा ही कोई छोटा-मोटा दूसरा काम। दो लाख रुपया... अपना वकील बताता था कि यदि यही लड़का किसी बड़े घर का होता तो क्लेम की राशि दस-पंद्रह लाख होनी थी।"

"यह वाली बात तूने मुझे पहले क्यों नहीं बताई?"

"तुझे क्या क्या बताऊँ?"

"बब्बा पढ़ने में होशियार था। आठवीं कक्षा में ज़िले में पहले नंबर पर आया था। क्लास का मोनीटर। मैंने कभी उसको किसी काम के लिए नहीं कहा। शीला जितनी बार भी आती, यही कहती थी, अपना बब्बा बड़ा अफ़सर बनेगा। जज ने यह कैसे कह दिया?"

"अपना वकील तो चंडीगढ़ हाईकोर्ट में अपील करने को कहता था।"

"सच?"

"हाँ।"

"तू चंडीगढ़ केस कर। पैसों की परवाह न करना। मुझे एक सौ पाँच और पंद्रह वाली मैडमों के संदेशे मिले हैं। मैं उनका काम भी सँभाल लूँगी। तू जज को बब्बे का आठवीं का सर्टिफिकेट दिखलाना। देखना, चंडीगढ़ वाली कचेहरी में उसका मोल कम से कम दस लाख पड़ेगा।"

आगे वह इतनी उतावली उतावली में बोलती है कि दुर्गादास को कुछ समझ में नहीं आता। वह सीधा ही उसके मुँह की तरफ़ देखता है।

"अब मुझे नींद नहीं आएगी।" रमणीक ने एकदम फ़ैसला सुना दिया। वह उठकर खड़ी हो गई। सोफे के कोने में पड़ा अपना पर्स उठाया। किस किया। टी.वी. की स्क्रीन की ओर देखा। थुथलाती हुई बोली, "ज्ञानो यहाँ तक भी सोच सकती थी? क्या छोटी जातियों का यही किरदार होता है?"

वह जाते जाते फिर मुड़ आई। पूछा, "इसका नाम क्या रखा है?"

"तुम ही बताओ, इसका नाम क्या रखूँ?"

"एक बार फिर 'चाइल्ड ईटर मदर' फिल्म देख लूँ। फिर मम्मा से भी डिस्कस करूँगी। तुम मेरे फोन का इंतज़ार करना। तुम्हारी इस टेलीफिल्म का नाम सिंबोलिक होना चाहिए।"

उसने फिर किस किया और कमरे में से बाहर चली गई।

मैंने उठकर दरवाज़ा बंद किया। मेरी चाची ज्ञानो का चेहरा मेरे आगे फिर साकार होने लगा। मैं ज्ञानो पर फिल्माए एपीसोड्स के बारे में फिर से सोचने लग पड़ा।